International Indexed, Refereed Research Journal, ISSN-2250-2629, (Print), E-ISSN-2320-5466, ISSUE-11, VOL-I, Nov,2013

शोध पत्र – हिन्दी

हिन्दी अनुसंधान साहित्य के इतिहास का विवेचन

* डॉ. सुनीता कुमारी

' मकान नं. 1339, अर्बन एस्टेट जीन्द (हरियाणा)

अतीत के तथ्यों का वर्णन– विश्लेषण जो कालक्रमानुसार किया गया हो, इतिहास कहलाता है। इतिहास के प्रति वस्तुपरक दृष्टिकोण से किया गया अनुसंधान जिसमें तर्कपूर्ण शैली एवं गवेषणात्मक पद्धति हो, उसे 'वैज्ञानिक' रूप प्रदान करता है। जबकि इतिहास के प्रति आत्मपरक दृष्टिकोण और ललित शैली से किया गया अनुसंधान उसे 'कलात्मक रूप प्रदान करता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में हम साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में करते हैं। इसे समझने के लिए तत्कालीन परिस्थितियों का अध्ययन आवश्यक है, साथ ही साहित्य के रचयिताओं की परिस्थितियों एवं मनोभावनाओं को जानना भी आवश्यक हो जाता है। एक बड़े विद्वान वर्ग के द्वारा भारतीय इतिहासकारों का दृष्टिकोण आदर्शमूलक एवं अध्यात्मवादी माना जाता है जबकि पाश्चात्य विद्वानों ने यथार्थ को महत्व देते हुए उसे अपनी तथस्थ खोज, अनुसंधान के बल पर वैज्ञानिक रूप प्रदान किया है। इतिहासकार अपने वर्तमान को अतीत से जोड़ने का प्रयास करता है और वर्तमान को भविष्य से भी। इन तीनों के आधार पर वह किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है। वह विभिन्न कालों की रचनाओं के माध्यम से तथ्यों का संकलन कर अपनी प्रतिभा के बल पर उन्हें एक सूत्र में पिरोकर हमारे सामने प्रस्तुत करता है। इस तरह अनुसंधान मे युगीन चेतना, सांस्कृतिक परम्पराओं का अध्ययन, साहित्यकार की रचनाओं का अध्ययन आलोचनात्मक पद्धति से किया जाता है। अनुसंधान के इतिहास का प्रारम्भ भी मानव–जाति के धरती पर जन्म के साथ ही हुआ था। आज का मानव जिन सुख–सुविधाओं को भोग रहा है। उनके मूल का आधार अनुसंधान की उपलब्धियाँ ही हैं। मानव सामाजिक जीवन की अभिलाषा रखता है और उसकी अभिलाषा भाषा के सम्पर्क से ही पूरी हो सकती हैं। यही भाषा आगे चलकर साहित्य का रूप धारण करती है। इसी कारण प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृतियों का संचित प्रतिबिंब होता है। जनता की चित्तवृतियों में जैसे–जैसे देशकाल, विभिन्न परिस्थितियों व घटनाओं के माध्यम से परिवर्तन होता रहता है। वैसे–वैसे साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से उसका स्वरूप परिलक्षित होता जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि हिन्दी साहित्य भारतीय जन मानस की सम्पूर्ण गतिविधियों को केन्द्र में रखकर लिखा जाता है और समसामयिक परिस्थितियों के अनुकूल उसका अनुसंधान लगभग सन् 1050 से ही किया जा रहा है। उपलब्ध हिन्दी के शोध ग्रन्थों से पता चलता है कि सर्वप्रथम हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी भाषा पर विदेशी विश्वविद्यालयों में शोध कार्य हुआ। शोध कर्ता भी अहिन्दी भाषी ही थे। उन्नीसवीं शताब्दी के उतरार्ध में हिन्दी साहित्य के विश्लेषण एवं विवेचन में फ्रांस के विद्वान गार्सा–द–तासी का विशेष उल्लेखनीय योगदान रहा है।

उन्होंने 'इस्तवार द ला लितरेव्यूर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' नामक ग्रंथ की रचना दो भागों में की इसके प्रथम भाग का प्रकाशन सन् 1839 ई0 में और द्वितीय भाग का प्रकाशन सन् 1847 ई. में हुआ। इसमें हिन्दी और उर्दू के अनेक कवियों का विवरण वर्णानुकम से प्रस्तुत किया गया है। इसमे कुछ कमियां थी जैसे–काल विभाजन का कोई प्रयास न करना, कवियों का काल क्रमानुसार वर्गीकरण न करना तथा युगीन परिस्थितियों का विवेचन न करना।

शिवसिंह सेंगर हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन में दूसरी महत्वपूर्ण कृति 'शिवसिंह सरोज' है। जिसकी रचना सन् 1883 ई0 में की। इसमें लगभग 1000 छोटे–बड़े कवियों का जीवन चरित, उनकी साहित्यिक कृतियों एवं कविता के उदाहरणों के साथ–साथ रचनाकाल व जन्मकाल भी दिया गया है। उनकी यह सरहानीय पहल रही क्योंकि उन्होंने हिन्दी कविता संबंधी विपुल सामग्री एक ग्रन्थ में एकत्रित कर दी थी।

मौल्वी करीमुद्दीन का 'तजकिरा –ई–शुआरा–ई–हिन्दी' भी इसी तरह का ग्रन्थ है। इसमें केवल 72 कवि ही हिन्दी के रहे शेष उर्दू के कवि थे। इसलिए इसको कवि कोश के रूप में मान्यता मिली। उन्होंने इसमें लगभग 1004 कवि व लेखकों के जन्म–मरण की तिथि एवं संवतों को देने का प्रयास किया। हालांकि ये कुछ ही कवियों के जन्म–मृत्यु दे पाये लेकिन फिर भी उन्होने अनेक विद्वानों को इस दिशा मे प्रेरित करने का काम किया। सर जॉर्ज ग्रियर्सन कृत 'माडर्न वर्नाकुलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' इसी प्रेरणा का परिणाम है। यह सन् 1888 ई0 में रचित है। इसका प्रकाशन एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल की पत्रिका के विशेषांक में करवाया गया था। अनेक विद्वानों ने इसे ही सही अर्थो में हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास माना क्योंकि इसमें पहली बार कवियों और लेखकों को कालक्रम से वर्गीकृत कर, उनकी प्रवृतियों पर भी प्रकाश डाला गया। ग्रियर्सन ने एक सुस्पष्ट भाषा नीति के आधार पर सिर्फ इसकी परिधि में हिन्दी कवियों को ही रखा। उन्होंने परवर्ती इतिहासकारों के लिए हिन्दी कवियों को चुनने का मार्ग

प्रशस्त किया। उन्होंने गार्सा–द–तासी एवं शिवसिंह सेंगर की सामग्री के साथ ही वार्ता साहित्य से भी ग्रंथ लिए और यथास्थान उनकी सूचना भी दी। सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने यह ग्रंथ अग्रेंजी भाषा में लिखा तथा इसे 11 विभिन्न अध्यायों में विभक्त किया। प्रत्येक अध्याय एक काल विशेष का सूचक है। सबसे पहले उन्होंने ही भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य की महत्वपूर्ण उपलब्धि बताते हुए इसे हिन्दी साहित्य का स्वर्ण युग माना। इस ग्रंथ के माध्यम से हिन्दी साहित्य से जुड़ी इधर–उधर बिखरी सामग्री को एक स्थान पर एकत्रित करने का प्रयास किया। अतः इस इतिहास को हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास होने का गौरव प्राप्त है। ग्रियर्सन के पश्चात् मिश्रबन्धुओं ने इनसे प्रेरणा पाकर और भी गहरायी से हिन्दी के कवि और उनके काव्यों का आलोचनात्मक परिचय देने का प्रयास किया।

मिश्र बन्धुओं ने 'मिश्र बन्धु विनोद' नामक ग्रंथ की रचना की। इसके चार भाग हैं। प्रथम तीन भागों का प्रकाशन सन् 1913 ई0 में और चौथे भाग का प्रकाशन सन् 1914 ई0 में हुआ। यह एक विशालकाय ग्रंथ है। इसमें लगभग 5000 कवियों के संबंध में विवरण है। इसमें पहली बार काल विभाजन का समुचित प्रयास किया गया। विभिन्न कालखण्डों के कवियों का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत करते हुए उनका साहित्यिक महत्व भी बताया। उन्होंने तुलनात्मक पद्धति का भी अनुसरण किया। इसी आधार पर इनका ग्रंथ बाद के साहित्यकारों के लिए कच्ची सामग्री जुटाने का साधन बना।

हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों में पं0 रामचन्द्र शुक्ल का नाम सर्वोपरि है। उन्होंने सन् 1929 ई0 में 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ हिन्दी शब्द सागर की भूमिका के रूप में लिखा जिसे बाद में स्वतन्त्र रूप दिया गया। उनका दृष्टिकोण निश्चित एवं सुस्पष्ट रहा। उन्होंने कहा कि ''प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृतियों का संचित प्रतिबिम्ब होता है।'' जनता की चित्तवृति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अन्त तक इन्हीं चित्तवृतियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य परम्परा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है। उन्होंने सम्पूर्ण साहित्य को चार काल खण्डों में विभाजित किया।

1– आदिकाल (वीरगाथा काल, सम्वत् 1050–1375 वि0)
2– पूर्व आदिकाल (भक्तिकाल, सम्वत् 1375–1700 वि0)
3– उतर मध्यकाल (रीतिकाल, सम्वत् 1700–1900 वि0)
4– आधुनिक काल (गद्य काल, सम्वत् 1900–1984 वि0)

उनका यह काल विभाजन अपनी सरलता एवं स्पष्टता के कारण लोकप्रिय हुआ और परवर्ती इतिहासकारों ने इसमें थोड़े–बहुत परिवर्तन कर इसी को आधार बना काल विभाजन किया। उन्होंने रीतिकालीन कवियों के आचार्यत्व पर भी विचार प्रकट किये। आ0 शुक्ल ने कवियों के जीवन परिचय की बजाय उनकी रचनाओं को महत्व दिया। उनके द्वारा कहे गये एक–एक वाक्य के मूल्यांकन का कार्य आज भी चल रहा है। हालांकि कई जगह वे पूर्वाग्राही नजर आए तुलसी के प्रति उनका मोह कबीर के प्रति अन्याय कर गया ऐसा कई विद्‌वानों का मानना है।

डा0 रामकुमार वर्मा द्‌वारा रचित 'हिन्दी साहित्य का अलोचनात्मक इतिहास' का एक भाग सन् 1938 में प्रकाशित हुआ। इसमें 693 ई0 से 1693 ई0 तक के कालखण्ड का विवेचन है। उन्होंने वीरगाथा काल को चारणकाल नाम दिया। उनकी सरलता एवं शैली की कलात्मकता के कारण यह ग्रंथ काफी लोकप्रिय हुआ। आश्चर्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की हिन्दी साहित्य से संबंधित तीन पुस्तकें आई। क–हिन्दी साहित्य की भूमिका ख–हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास ग–हिन्दी साहित्य का आदिकाल। आचार्य द्विवेदी द्वारा रचित 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' यद्यपि इतिहास ग्रंथ नही है, परन्तु उसमें नीहित सामग्री इतिहास लेखन हेतु नयी सामग्री व नई व्याख्या प्रस्तुत करती है। आ0 शुक्ल के वीरगाथा काल को उन्होंने आदिकाल कहा। उन्होंने आ0 शुक्ल के कई विचारों का खण्डन किया जैसे शुक्ल जी ने भक्ति आन्दोलन का उदय पराजित हिन्दू जाति की निराशा को माना तो आचार्य द्विवेदी जी ने इसका खण्डन किया। उन्होंने कबीर की अवहेलना करने वाले आलोचकों की कड़े शब्दों में निन्दा की। उन्होंने कबीर की काव्य प्रतिभा को उजागर करने के साथ–साथ ऐतिहासिक चेतना व पूर्व परम्परा के बोध की बातें की।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन व अनुसंधान की यह परम्परा निरन्तर प्रगतिशील है। इनमें कुछ प्रमुख ग्रंथ निम्न है। सं0 डा0 धीरेन्द्र वर्मा–हिन्दी साहित्य, डा0 भगीरथ मिश्र हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास, डा0 नगेन्द्र–रीतिकाव्य की भूमिका, डा0 गणपति चन्द्र गुप्त–हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र– हिन्दी साहित्य का अतीत, प्रभुदयाल मीतल–चैतन्य सम्प्रदाय और उसका साहित्य, परशुराम चतुर्वेदी–उतरी भारत की सन्त परम्परा, डा0 मोतीलाल मेनारिया–1 राजस्थानी भाषा और साहित्य 2– राजस्थानी पिंगल साहित्य, डा0 नलिन विलोचन शर्मा हिन्दी साहित्य का इतिहास दर्शन, पं0 महेश दत्त शुक्ल–हिन्दी काव्य संग्रह, प0 रामनरेश त्रिपाठी–कविता कौमुदी (दो भाग), बाबू श्यामसुन्दर दास–हिन्दी भाषा और साहित्य, सूर्यकान्त शास्त्री–हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, आ0 चतुरसेन–हिन्दी साहित्य का इतिहास, नगरी प्रचारिणी सभाकाशी–हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (18 खण्डों में) इसके छटे भाग रीतिकाल का सम्पादन डा0 नरेन्द्र ने किया है। डा0 बच्चन सिंह–आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, डा0 रामस्वरूप चतुर्वेदी हिन्दी साहित्य और सवेंदना का इतिहास, डा0 टीकम सिंह तोमर–हिन्दी वीर काव्य आदि साहित्यकारों, आलोचकों ने समसामायिक समस्त कृतियों का विवेचन व विश्लेषण कर हिन्दी साहित्य को एक

नई दिशा की ओर अग्रसर कियाा। हिन्दी साहित्य के प्रति शोधार्थियों की रूचि को और भी बढ़ाया। उपरोक्त विद्वानों के किये गए अनुसन्धानों के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य को आदिकाल (सन् 1050–1375), भक्तिकाल (1375–1700), रीतिकाल (1700–1900) तथा आधुनिक काल (1900 से आज तक) चार कालों मे विभाजित किया गया है। हिन्दी साहिय के अनुसंधान में साहित्य के कवियों उनके साहित्य, उनमें निहित प्रवृतियों का सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों के अध्ययन के साथ–साथ विभिन्न कालों की समस्याओं के समाधानों का परीक्षण भी किया गया है।

आदिकाल में संस्कृत में रचित रामायण एवं महाभारत व ऋग्वेद जैसे ग्रंथों के एक–एक वाक्य पर अनुसंधान हुए। पालि, प्राकृत व अपभ्रंश में रचित साहित्य व इन भाषाओं के बदलते स्वरूप पर भी ग्रंथ लिखे गए। अपभ्रंश से निकली क्षेत्रीय भाषाओं में शैरसैनी अपभ्रंश से–पश्चिमी हिन्दी, और अर्द्वभागधी अपभ्रंश से पूर्वी हिन्दी का विकास हुआ। इन भाषाओं में रचित रचनाओं पर एवं अपधी व ब्रजभाषा में रचित रचनाओं को रासों व जैन साहित्य के अतिरिक्त नाथ एवं सिद्ध साहित्य के रचनाकार व उनकी रचनाएं, समकालीन परिस्थितियों के आधार पर विवेचित की गई।

भक्तिकाल में भक्तिकाल के उदय की परिस्थितियाँ, उसके कारण, उसका वर्गीकरण, आलवर व वैष्णव सम्प्रदाय, उसके आचार्य और उनके सिद्धान्त, हिन्दी सन्त परम्परा व संतो की रचनाएँ और उनकी विशेषताएँ हिन्दी सूफी काव्य, उसके स्त्रोत, उसकी मान्यताएं, उसके कवि व उनकी रचनाएं। हिन्दी में कृष्णकाव्य, उसके विविध सम्प्रदाय, कृष्णभक्त कवि और उनकी रचनाएं, हिन्दी में रामकाव्य उसके प्रमुख ग्रंथ, उसके कवि व उनकी कृतियों को शामिल कर उस पर अनेक अनुसंधान किए गए। रीतिकाल को अनेक विद्ववानों ने समकाली प्रवृतियों के आधार पर अलग–अलग नाम दिए। मित्रबंधुओं ने इसे अलंकृत काल कहा, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने इसे श्रृंगार काल कहा और आ0 रामचन्द्र शुक्ल ने इसे रीतिकाल कहा। विशेष प्रकार की रीति, पद्धति, शैली और काव्यांग निरूपण के आधार पर इसे रीतिकाल नाम दिया गया। रीतिकाल की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, रीतिकाल के स्त्रोत, रीतिकाल का वर्गीकरण, रीतिकाल के कवि और उनकी रचनाएं, रीतिकाल में रचित मुक्तक व प्रबन्ध काव्य रीतिकालीन प्रवृतियाँ आदि इस काल में अनुसंधान का विषय बनी।

आधुनिक काल को भी अनेक विद्वानों ने अलग–अलग नाम दिए हैं। इसको आ0 शुक्ल ने गद्यकाल, मिश्रबन्धुओं ने वर्तमान काल, डा0 रामकुमार वर्मा और डा0 गणपति चन्द्रगुप्त ने आधुनिक काल कहा। इस काल में अनेक विधवाओं का विकास हुआ। आ0 रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार आरंभ में ब्रजभाषा में गद्य का विकास हुआ। इस क्रम में वल्लभाचार्य के पुत्र गोसाई विटठ्लनाथ ने 'श्रृगांर रस मण्डन' नामक ग्रंथ ब्रजभाषा गद्य में लिखा। लेकिन इसकी भाषा अपरिमार्जित एवं अव्यवस्थित है। उसके बाद 'चौरासी वैष्णव की वार्ता' व 'दौ सौ बावन वैष्णव की वार्ता' ब्रजभाषा गद्य में लिखी गई। खड़ी बोली गद्य में गंगकवि ने 'चंद छन्द बरनन की महिमा' नामक पुस्तक लिखी। उसके बाद 1741 ई0 में रामप्रसाद निरंजनी ने 'भाषा योगवशिष्ठ' नामक पुस्तक साफ–सुथरी खड़ी बोली में लिखी। इसी दौरान मुंशी सदासुख लाल रियाज, इंशा अल्लाखाँ, लल्लूलाल और सदल मिश्र जैसे विद्ववानों ने हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा के लिए 'फोर्ट विलियम' कॉलेज में पढ़ाना शुरू किया। ब्रिटिश शासन की आर्थिक मदद से इन्होंने खड़ी बोली हिन्दी मे गद्य ग्रंथों का निर्माण शुरू किया। मुंशी सदासुखलाल ने संस्कृत निष्ठ शब्दों का प्रयोग कर खड़ी बोली को अपनाया और इशां अल्लाखां ने उर्दू निष्ठ शब्दों का प्रयोग कर खड़ी बोली का प्रसार किया। कालान्तर में खड़ी बोली के शब्दों का अन्वेषण कर स्वतन्त्र गद्य भाषा के निर्माण में इनका बहुत योगदान रहा। लल्लू लाल जी की भाषा में ब्रजभाषापन है। मुहावरों के प्रयोग से इनकी भाषा में बोझिलता आ गई थी। 'बिहारी सतसई' पर इन्होंने 'लालचन्द्रिका' नाम से एक टीका भी लिखी। सदल मिश्र ने 'नासिकेतोपाख्यान' नामक पुस्तक लिखी। इनकी भाषा जन सामान्य की भाषा के रूप में उभरी। इनकी भाषा में ब्रजभाषा के साथ–साथ कुछ पूरबीपन भी था। इसी कड़ी मे राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द और राजा लक्ष्मण सिंह का नाम भी बड़े ही आदर से लिया जाता है। अनेक समाज सुधारकों, व भारतेन्दु जी, महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के कारण धीरे–धीरे हिन्दी से संस्कृत निष्ठ क्लिष्ठ शब्द, उर्दू व फारसी के शब्द, सरल शब्दों से मिलकर हिन्दी भाषा के अनुसंधान का आधार बनते गये।

हिन्दी साहित्य में गद्य भाषा के विकास के साथ–साथ कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, कविता नये आयामों के साथ, जीवनी, निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, यात्राचित्र, आलोचना, रिर्पोताज आदि अनेक साहित्यिक विधाओं का निरन्तर विकास होने लगा। इन विधाओं के माध्यम से अनेक साहित्यकारों ने मानव–जीवन से संबधित अनेक गति– –विधियों का चित्रण समकालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए गद्य व पद्य के माध्यम से किया। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं को समाज का प्रतिबिम्ब बनाया। उन्होंने मानव जाति से संबधित हर छोटी से छोटी समस्या पर अपने विचार संवेदनशीलता से अभिव्यक्त किए। समाज के हर वर्ग की कहानी हम साहित्य के माध्यम से गहराई तक जान सकते हैं। मनुष्य जिन सुख–सुविधाओं को भोग रहा है। वह अनुसंधान का ही परिणाम है। जीवन से जुड़े हर क्षेत्र पर लगातार आदिकाल से अब तक तरह–तरह के अनुसंधान हो रहे हैं। भौतिक प्रायोगिक क्षेत्र के साथ ही

चिन्तन के क्षेत्र में व साहित्य के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। पुरानी गल–सड़ चुकी परम्पराओं का खण्डन कर नई नीतियों का मण्डन हो रहा है। बौद्धिक सिद्धियों का प्रभाव समाज के संगठन, आर्थिक व्यवस्था, राजनैतिक व्यवस्था, कलात्मक सृजन पर तेजी से पड रहा है और जीवन के ढांचे को तीव्र गति से बदल रहा है। साहित्यकार अपनी लेखनी से इस बदलाव की झलकी देशकाल, वातावरण व वस्तुगत तथ्यों के आधार पर अनुसंधान के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। साहित्यकार अपनी सूझ–बूझ से विश्व को एकता के सूत्र में बांधकर अखंडता का पाठ पढ़ाता है। यह प्रयास अनवरत आदिकाल से इक्कीसवीं सदी तक चला आ रहा है।

आज आधुनिक साहित्य की खोज में विद्‌वानों या शोधार्थियों को ज्यादा थका देने वाले परिश्रम की जरूरत नहीं पड़ती। क्योंकि आधुनिक गद्य व पद्य साहित्य की कृतियाँ नई तकनीकी से मुद्रित एवं प्रकाशित होती हैं। उन्हें हम देश के किसी भी कोने में बैठकर थोड़े से परिश्रम से ही प्राप्त कर सकते हैं। आज विस्तृत पटल पर शोध कार्य प्रगति पर है। विगत अनेक वर्षों में भारत में अनेक विश्वविद्यालय और उनसे संबधित महाविद्यालय स्थापित हो चुके हैं। जिनके माध्यम से सैकडों की संख्या में शोधार्थी उच्चत्तर शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं और निरन्तर शोध–कार्यों में लगे हुए हैं।

अनुसंधान के कारण ही हमें सभी विधाओं के कवि एवं लेखकों की रचनाओं में संकलित जीवन से संबंधित समस्याओं और उनके समाधानों एवं उनके किसी भी विषय पर दृष्टिकोण को जानने का अवसर मिलता है। आगे भी अनुसंधान की यह प्रक्रिया हिन्दी साहित्य जगत में निरन्तर चलती रहगी और शोधार्थियों के लिए प्रेरणादायी बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ

1– दूरस्थ शिक्षा विभाग नोट्स–मदुरई कामराज विश्वविद्यालय
2– प्रतियोगिता साहित्य सीरिज–अशोक त्रिवारी
3– दूरस्थ शिक्षा विभाग नोटस् कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरूक्षेत्र
4– अनुसंधान प्रविधि–डा0 एस.एन.गणेशन
5– अनुसंधान प्रविधि और क्षेत्र–राजमल बूरा।
6– हिन्दी अनुसंधान–डा0 वी. पी. सिंह
7– साहित्य अनुसंधान के आयाम–डा0आर0के0जैन

शोध पत्र

पृथक विदर्भ की मांग और ब्रजलालजी बियाणी

* डॉ. विभा देशपांडे

' कला व विज्ञान महाविद्यालय, कुऱ्हा

प्रस्तावना

विदर्भ पृथक प्रांत की स्थापना की यह मांग नई नहींथी। उसके पीछे एक इतिहास है स्व दादा सहाब खापर्डे और राव बहादुर मधोलकर इन्होंने मराठी भाग को हिन्दी भाग के साथ रखने के सरकार की कार्यवाही के प्रति असंतोष प्रकट किया था, 1918 में अंग्रेजी राज्यमें बनाई गई भारतीय राज्य सुधार समिती ने सर्वप्रथम भाषा और संस्कृति के आधार पर गठन की बात कही। तत्पश्चात 1920 में अखिल भारतीय कॉंग्रेस ने भी भाषावर प्रांत बनाने की योजना केलिए आवाज उ़ठाई। 1924 में सेन्ट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली में मा. श्री.अणेने भाषावार प्रांत बानाने को कहा। उपरोक्त कार्यवाही के अलावा और एक, पृथक विदर्भ के लड़ाई के लिये महत्वपूर्ण टप्पा, याने । "अक्टूबर 1938 को मध्यप्रांत और बरार प्रांतिय विधि मंडल द्वार किया गयाप्रस्ताव", इसके द्वारा विदर्भ को नया प्रान्त बनाने के लिये सिफारिश की गई थी। इस प्रस्ताव में कहा गया थाकि ये विधि मंडल प्रांतिय सरकार को सिफारिश करती है कि, इस प्रांत का मराठी भूभाग मिलकर विदर्भ इस नाम का एक नया गव्हर्नर का प्रांत निर्माण करने के लिये, जितने जल्दी हो सके उपाय योजना की जाये।

विदर्भ के प्रश्न को लेकर 22 अक्तूबर 1948 को 'महाविदर्भ परिषद' का निर्माण किया गया। अकोला करार, नागपूर करार किया गया । परंतु इस पवित्र करार को आज तक लागू नहीं किया गया। हमारे विदर्भ के नेता ब्रजलाल बियाणी ने पृथक विदर्भ की मांग के लिये काफी प्रयत्न किये उनके अनुसार महाविदर्भ अलग मांगने का महाविदर्भ की जनता को अधिकार है। बियाणी की द्वारा महाविदर्भ परिषद की जगह – जगह सभाएँ व सम्मेलन लिये गये इस मांग के समर्थन में आचार्य विनोबा भावे ने भी सहमति दी। 4/5/1949 को बियाणी जी के नेतृत्व में परिषद ली गई। 25/5/1949 को लोणार में ली गई इन दिनों ही परिषद में महाविदर्भ का प्रस्ताव एकमत से मंजूर किया गया। उस समय भी विदर्भ के समर्थन और विरोध, ऐसे दो पक्ष विदर्भ की राजनीति में पड़ गए। उन पर तत्कालीन नेताओं ने काफी आरोप भी लगाये कहा गया कि बियाणी ये हिन्दी □ाषी है, फिर उनको अलग विदर्भ क्यों चाहिये ? विशेष यह की ब्रजलालजी के नेतृत्व में ही तैयार हुयें नेताओं द्वारा उन पर यह आरोप रखें गये और उनका साथ छोड़ दिया। इस संबंध में जनता का कौल लेकर पूछा गया कि बियाणीजी की पृथक विदर्भ की मांग को पूरी न हो सकी तो 73.34 लोगों का कहना हैं कि विदर्भ के नेताओं में आपसी संघर्ष के कारण, भाषावाद, जातिवाद के राजनीति के कारण और यह मांग हिंदी भाषी व्यक्ति द्वारा उठाई गई थी साथ ही मराठा समाज और पश्चिमी महाराष्ट्र का राजनीति पर प्रभाव होने के कारण यह मांग पूरी न हो सकी। विदर्भ में जातीय राजनीति के कारण और नेताओं में आपसी संघर्ष के कारण यह मांग पूरी न हो सकी।

वर्तमान में फिर पृथक विदर्भ की मांग चालू ही है, आज हमारे सामने यह सवाल उठता है कि क्या पृथक विदर्भ निर्माण हो सकेगा? यह एक विचारार्थ प्रश्न हैं। क्योंकि संशोधान करते समय मुलाकात के दौरान लोगों से प्रश्न पूछा की क्या बियाणी जी के स्वप्न की पूर्ति (पृथक विदर्भ) वर्तमान राजकीय स्थिती में हो सकती है? तो 60 लोगों ने इसके जवाब में कहा कि नहीं हो सकती क्यों कि विदर्भ की राजनीति में पश्चिमी महाराष्ट्र के नेताअें का ज्यादा प्रभाव है, वर्तमान विदर्भ नेताओं द्वारा भी पुनः पृथक विदर्भ की मांग की जा रही है।परंतु विदर्भ के नेता जातिवाद, भाषावाद की राजनीति के कारण आज भी एकत्रित होकर इसके लिये माँग नहीं करते, निर्वाचन के समय कहते हैं, लेकिन जीतने के बाद इस बात की तरफ धयान नहीं देते, छत्तीसगढ़, झारखंड प्रांत हो सकता हैं तो विदर्भ क्यों नहीं? आज पृथक विदर्भ की मांग आगे आयी तो स्व– ब्रजलाल जी की याद आये बिना नहीं रही, हम सभी लोग यदि मिलकर सतत प्रयत्न करें तो यह मांग पुरी होगी।

वर्तमान समय में भी पृथक विदर्भ की मांग जोर – शोर से चालू हैं। विविध समाचार पत्रों द्वारा इस संदर्भ में जनमत का कौल लिया गया, इसके लिये चर्चा सत्र, मतदान इत्यादि लिया गया, उसमें यह निष्कर्ष निकला की छोटे – छोटे राज्य

यदि निर्माण किये गये तो विकास अच्छी तरह से हो सकता है, इसका उत्तम उदाहरण अमेरिका है। परंतु नेताओं की राजनीति के कारण यह नहीं हो पा रहा है। राजनीति विरहित जनसमर्थन मिलना अत्यंत आवश्यक है। सर्वांगीण विकास हेतु विदर्भ राज्य निर्माण होना आवश्यक है। तो इसके विपरीत कुछ लोगों का कहना है कि छोटे – छोटे राज्य निर्माण करने की आवश्यकता नहीं, विदर्भ का विकास यहाँ के नेतृत्व ठीक न होने के कारण खुंट गया है। ऐसा शिवसेना उपजिला प्रमुख शांतराम जगताप, महाराष्ट्र नव निर्माण सेना के जिल्हाध्यक्ष श्री संजय गायकवाड इत्यादि ने कहाँ इन्होंने पृथक विदर्भ का विरोध किया है, इनके मतानुसार संयुक्त महाराष्ट्र आवश्यक है, क्योंकि छोटे राज्यों पर कर्ज का बोझा बढ़ जाता है। इस तरह पृथक विदर्भ पर चर्चा, विचार विमर्श से यह निष्कर्ष निकला की बहुतांश लोगों का कहना है कि पृथक विदर्भ आवश्यक है। युवा नेतृत्व ने ये प्रश्न जन आंदोलन के माध्यम से निरंतर उठाया तो ही पृथक विदर्भ राज्य संभव है।

संदर्भ ग्रंथ

1) मातृभूमी समाचार पत्र सम्पा. – प्रमिलाताई ओक दि. 13/10/1939
2) मातृभूमी समाचार पत्र सम्पा. – श्री शिवचन्द्र वी नागर दि. 13/10/1953
3) काळ्या मातीचे बोल – गेडाम शंकरराव, मयंक प्रकाशन नागपूर, संस्करण प्रथम,1994, पृ. क्र. 7.
4) तरुण भारत समाचार पत्र – 14 अगस्त 2013.